International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.340, Volume 04, No. 01(II), January - March, 2022, pp.188-198

भारतीय संविधान में मौलिक अधिकार एवं न्यायपालिका

डॉ. दिनेश कुमार गहलोत*

प्रस्तावना

भारतीय संविधान की खूबसूरती का एक कारण इसमें विस्तार से मौलिक अधिकारों का उल्लेख होना है। मौलिक अधिकारों की रक्षा के समुचित प्रावधान भी संविधान हैं। संविधान सभा में मौलिक अधिकारों पर पर्याप्त बहस देखने को मिलती है। 26 जनवरी, 1950 को संविधान लागू होते समय सात मौलिक थे, वर्तमान में छः मौलिक अधिकार है। संविधान लागू होने के लगभग 72 वर्षों में न्यायपालिका ने मौलिक अधिकारों की रक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं व्यवस्थापिका द्वारा बनाये गये कानूनों तथा कार्यपालिका के कृत्यों की व्याख्या संविधान के आधार पर करके न्यायपालिका ने नागरिकों के मौलिक अधिकार की रक्षा में निर्णायक कार्य किया है। हम यहां पर संविधान में उल्लेखित मौलिक अधिकारों की व्याख्या न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के संदर्भ में कर रहे हैं।

भाग तीन को भारतीय संविधान का 'मेग्नाकार्टा' कहा जाता है। दरअसल 1208 में इंग्लैण्ड के राजा द्वारा इंग्लैण्ड की जनता को दिये गये अधिकारों के दस्तावेज को 'मेग्नाकार्टा' कहा जाता है। भारतीय संविधान के भाग तीन में भी नागरिकों के अधिकारों का उल्लेख होने के कारण इसकी तुलना 'मेग्नाकार्टा' से की जाती है। मूल अधिकार व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास की न्यूनतम आवश्यकतायें है। मूल अधिकार राज्य के विरूद्ध प्राप्त होते है। यदि राज्य की स्थापना के सामाजिक समझौता सिद्धान्त का अध्ययन किया जाए तो उससे यह स्पष्ट होता है कि राज्य की स्थापना ही समाज में व्यवस्था को स्थापित करने अथवा मत्स्य न्याय (बड़ी मछली द्वारा छोटी मछलियो का आहार बना लेना) को समाप्त करने हेतु हई। कबीला सस्कृति के युग में सभी लोगों ने अपने अधिकार राज्य के पक्ष के त्याग दिये थे। लेकिन इससे राज्य रूपी सस्था ने शोषक का रूप धारण कर लिया। राज्य के शोषक स्वरूप के विरूद्ध लोगों द्वारा किये गये संघर्ष के फलस्वरूप लोगो को कुछ अधिकार दिये गये, उन्हें ही मूल अधिकार कहा जाता है। मूल अधिकार राज्य के विरूद्ध होने के कारण ही अधिकाश मूल अधिकारों की प्रकृति निषेधात्मक होती है।

मूल अधिकार वाद योग्य है। इनकी रक्षा करने का दायित्व अनुच्छेद 32 के तहत् उच्चतम न्यायालय का है एवं वह इनसे इन्कार भी नहीं कर सकता है। मूल अधिकार मानवाधिकारों की तुलना में संकीर्ण है। क्योंकि मानवाधिकार मानव के मानव होने के नाते प्राप्त होते है साथ ही यह किसी देश की सीमा में बधे हुये नही होने के कारण सीमातीत होते है। जबकि मूल अधिकार नागरिकों को प्राप्त होते है। अधिकांश मूलाधिकार केवल देश के नागरिकों को ही प्राप्त होते है।

मूल संविधान में 7 मौलिक अधिकारों का उल्लेख था। वर्तमान में 6 मौलिक अधिकार है। 44 वें संविधान संशोधन द्वारा 1978 में 'सम्पत्ति का अधिकार' को मूल अधिकार के रूप में समाप्त कर दिया गया है, अब ये एक विधिक अधिकार है जिसका उल्लेख संविधान के भाग XII के अनुच्छेद 300 A में है।

* सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान।

मौलिक अधिकार राज्य के विरूद्ध में प्राप्त होते है। इस कारण से इनकी प्रकृति निषेधात्मक होती है।

अनुच्छेद 12: इसके अन्तर्गत 'राज्य' शब्द को परिभाषित किया गया है। वे सभी सस्थाएँ राज्य शब्द की परिभाषाओं में आती है, जिनकी स्थापना सरकार ने की हो या जो सरकार से वित्तीय सहायता प्राप्त करती हो।

अनुच्छेद 13 : (i) में ये उल्लेखित है कि इस संविधान के लागू होने से पहले की कोई भी विधि यदि मौलिक अधिकारों के साथ असंगत हैं तो शून्य होगी।

अनुच्छेद 13 : (ii) में यह उल्लेखित है कि इस संविधान के लागू होने के बाद की कोई विधि यदि मौलिक अधिकारो के साथ असगत है तो शून्य होगी।

न्यायपालिका द्वारा किसी भी 'विधि' की समीक्षा संविधान के आधार पर करना न्यायिक पुनरावलोकन कहलाता हैं। अनुच्छेद 13 न्यायिक पुनरावलोकन का संवैधानिक आधार है। हालांकि संविधान के किसी भी अनुच्छेद में 'न्यायिक पुनरावलोकन' जैसा शब्द उल्लेखित नहीं हैं।

अनुच्छेद 13 : (iii) में 'विधि' शब्द को परिभाषित किया गया है। इसके अनुसार संसद या राज्य विधानमण्डल द्वारा बनाये गये सभी कानून, आदेश, नियम, विनियम (Regulation). अधिसूचना (Notification) परिपत्र, अध्यादेश तथा प्रथाएँ विधि शब्द की परिभाषा में आती हैं।

अनुच्छेद 13 : (iv) में ये उल्लेखित है कि इस अनुच्छेद की कोई बात अनुच्छेद 368 के अधीन किये गये संविधान संशोधन पर लागू नहीं होगी। 24 वें संविधान संशोधन द्वारा इस धारा को जोडा गया। **केशवानन्द भारती बनाम केरल राज्य 1973** [1] के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने ये निर्णय दिया कि अनुच्छेद 368 के तहत् संसद को संविधान मे संशोधन करने का अधिकार है, लेकिन उसे आधार भूत संरचना को ध्यान में रखना होगा। इस आधार पर संविधान संशोधनों को भी न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है। अनुच्छेद 13 के प्रावधानों से दो सिद्धान्त प्रतिपादित होते है –

आच्छादन का सिद्धान्त (Doctrine of Eclipse) **:** कोई भी ऐसी विधि या किसी कानून की धारा यदि संविधान के साथ असंगत हैं तो वह धारा समाप्त न होकर संविधान उस पर आच्छादित हो जायेगा।

पृथक्करण का सिद्धान्त (Ipatrine of severability) **:–** यदि किसी कानून की कोई धारा संविधान के साथ असंगत हैं तो सम्पूर्ण कानून समाप्त नहीं होकर वह धारा समाप्त हो जाती है। उदाहरणार्थ **श्रेया सिंघल बनाम भारत संघ (2012)** [2] वाद में सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 की धारा 66। समाप्त कर दी गई। ठीक इसी प्रकार **जोसेफ शाइन बनाम् भारत संघ (2018)** [3] में आई.पी.सी. की धारा 497 समाप्त की गई।

समानता का अधिकार

(अनुच्छेद 14 **से** 18)

अनुच्छेद 14 के अनुसार सभी व्यक्तियों के लिए विधि के समक्ष समानता या विधियों का समान संरक्षण होगा। विधि के समक्ष समानता की अवधारणा इंग्लैण्ड से ली गई। इसके अनुसार विधि सभी व्यक्तियों के लिए समान रूप से लागू होगी। इसे नकारात्मक अवधारणा कहा जाता हैं। विधियों का समान संरक्षण की अवधारणा अमेरिका से ली गई हैं। इसके अनुसार सकारात्मक भेदभाव किया जा सकता हैं। अर्थात् इसका यह अभिप्राय है कि समान लोगो के साथ समान व्यवहार किया जाना चाहिए।

अनुच्छेद 15(i) में ये उल्लेखित है कि राज्य किसी भी नागरिक के साथ जाति, मूलवंश, धर्म, लिंग तथा जन्म स्थान के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगा।

अनुच्छेद 15(ii) में ये उल्लेखित है कि सभी सार्वजनिक स्थान, तालाब, कुएँ, सडक, भोजनालय, होटलें तथा मैदान समाज के सभी वर्गों के लिए खुले रहेंगे।

अनुच्छेद 15(iii) में उल्लेखित है कि राज्य महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान कर सकता है

अनुच्छेद 15(iv) में ये उल्लेखित है कि राज्य सामाजिक व शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए नागरिकों या अनुसूचित जाति व जन जाति के लिए विशेष प्रावधान कर सकेगा।

चम्पाकम दौराईजन बनाम मद्रास राज्य (1950) [4] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने मद्रास राज्य के साम्प्रदायिक आदेश को रद्द किया था। इस निर्णय के प्रभाव को समाप्त करने हेतु संसद ने (संविधान सभा) प्रथम संविधान संशोधन द्वारा 1951 में 15(iv) नामक धारा जोड़ी थी। अनुच्छेद 15(iv) शिक्षण संस्थाओं में आरक्षण का आधार हैं।

चम्पाकम दौराईजन मद्रास की एक ब्राह्मण लडकी थी। मद्रास सरकार के साम्प्रदायिक आदेश के कारण उसका मेडिकल कॉलेज में प्रवेश नहीं हुआ था। इस कारण चम्पाकम दौराईजन ने न्यायालय में साम्प्रदायिक आदेश को चुनौती दी।

अनुच्छेद 15(v) इसके द्वारा एससी, एसटी तथा समाज के पिछड़े हुए लोगों के लिए उच्च शिक्षण संस्थाओं में आरक्षण का प्रावधान किया गया हैं। **93**वें संविधान संशोधन द्वारा वर्ष **2007** में इस धारा को जोड़ा गया था। **अशोक कुमार ठाकुर बनाम भारत संघ (2008)** [5] में 93वें संविधान संशोधन को चुनौती दी गई थी जो खारिज की दी गई।

अनुच्छेद 15(vi) यह 103वें संविधान संशोधन द्वारा 2019 में जोड़ी गई। इसके अनुसार आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के लिये शिक्षण संस्थानों में दस प्रतिशत स्थान आरक्षित किये गये।

अनुच्छेद 16(i) के तहत् लोक नियोजन (सरकारी नौकरियों) में सभी को समान अवसर प्राप्त होगा। वैसे 'अवसर की समानता' का उल्लेख प्रस्तावना में भी हैं।

अनुच्छेद 16(ii) के अनुसार राज्य रोजगार में किसी भी नागरिक के साथ जाति, मूलवंश, धर्म, लिंग, उद्भव, जन्मस्थान तथा निवास स्थान के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगा।

अनुच्छेद 16(iii) में उल्लेखित प्रावधानों के अनुसार राज्य सरकारी नौकरियों में 'निवास के आधार पर प्राथमिकता दे सकता हैं, लेकिन इस संदर्भ में विधि बनाने की शक्ति संसद में निहित है।

अनुच्छेद 16(iv) इसके द्वारा राज्य समाज के ऐसे पिछड़े हुए नागरिक जिनका सरकारी नौकरियों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं हैं, उनके लिए आरक्षण की व्यवस्था कर सकेगा। अनुच्छेद 16(iv) सरकारी नौकरियों में आरक्षण का आधार हैं। अनुच्छेद **340** में पिछड़ें वर्गों की स्थिति का अध्ययन करने हेतु राष्ट्रपति द्वारा एक आयोग के गठन का उल्लेख हैं। 1953 में पण्डित नेहरू की सरकार द्वारा इस संदर्भ में काका कालेलकर की अध्यक्षता में आयोग का गठन किया गया था। 1955 में इसने अपना प्रतिवेदन दिया। काका कालेलकर आयोग ने ओ.बी.सी. के आरक्षण की अनुशंसा की थी। लेकिन यह अनुशंसा लागू नहीं की गई। 1978 में मोरारजी देसाई की सरकार द्वारा 'बिन्देश्वरी प्रसाद मण्डल' (बी.पी. मण्डल) की अध्यक्षता में एक अन्य आयोग का गठन किया। 1980 में इसने अपना प्रतिवेदन दिया। मण्डल आयोग ने भी ओ.बी.सी. आरक्षण की अनुशंसा की थी। अगस्त 1990 में वीपी सिंह की सरकार द्वारा मण्डल आयोग की अनुशंसाओं को लागू करते हुए ओ.बी.सी. को 27 प्रतिशत आरक्षण दिया गया। पी.वी. नरसिम्हा राव की सरकार ने इसके साथ सामान्य वर्ग को आर्थिक आधार पर आरक्षण दिया। **इन्द्रा साहनी बनाम भारत संघ** (1992) **[6]** के मामले में इन दोनों आरक्षणों को चुनौती दी गई। इस वाद में आरक्षण के संदर्भ में सबसे व्यापक निर्णय दिया गया। उक्त निर्णय 16 नवम्बर 1992 में दिया गया। जो निम्न हैं –

- ओ.बीसी. का आरक्षण संवैधानिक हैं। (सामाजिक व शैक्षणिक पिछड़ापन का उल्लेख संविधान में है।)
- सामान्य वर्ग का आरक्षण असंवैधानिक हैं। (आर्थिक पिछड़ेपन का उल्लेख संविधान में नहीं हैं।)
- आरक्षण की अधिकतम सीमा 50 प्रतिशत होगी। (विशेष परिस्थितियों में बढ़ाया जा सकता हैं।)
- पदोन्नति में किसी प्रकार का कोई आरक्षण नहीं होगा।

- क्रिमीलेयर को आरक्षण के दायरे से बाहर किया जाना चाहिए।
- इस वाद को मण्डलवाद के नाम से भी जाना जाता है।

अनुच्छेद 16(**IV**)**A** – 77वें संविधान संशोधन (1995) में 16(**iv**)**A** नाम नया अनुच्छेद जोड़ा गया, जो कि एससी, एसटी में पदोन्नति में आरक्षण की व्यवस्था करता हैं। 85वें संविधान संशोधन द्वारा 2000 में अनुच्छेद 16(iv)**A** में पदोन्नति के साथ वरिष्ठता शब्द का भी उल्लेख किया गया।

अनुच्छेद 16(IV)B – 81वें संविधान संशोधन द्वारा वर्ष 2000 मे अनुच्छेद 16 (IV) B नामक नया अनुच्छेद जोड़ा गया था। **इन्दिरा साहनी वाद** में यह निर्णय दिया गया कि आरक्षण की अधिकतम सीमा 50 प्रतिशत ही हो सकती है। जबकि कई बार आरक्षित स्थानों पर योग्य व्यक्ति नहीं मिल पाते है। इस कारण से बैकलॉग की भर्ती करते समय 50 प्रतिशत की सीमा को पार करने हेतु यह अनुच्छेद जोड़ा गया। जो कि बैकलॉग से सम्बन्धित है।

अनुच्छेद 335 में मूल रूप से यह उल्लेखित था कि लोक सेवाओं में आरक्षण देते समय प्रशासनिक दक्षता को ध्यान में रखा जायेगा। 82 वें संविधान संशोधन वर्ष 2000 में अनुच्छेद 335 के अन्तर्गत यह संशोधन किया गया कि एस.सी. व एस.टी. को अर्हता अंकों में छूट दी जा सकें।

एम. नागराज बनाम भारत संघ (2006) [7] वाद में 77 वें, 81वें, 82वें, व 85वें संविधान संशोधन को चुनौती दी गई। इस वाद में चुनौती खारिज कर दी गई, तथा इस वाद में न्यायालय ने आरक्षण के निम्न आधार बतायें–

पिछड़ापन

- सामाजिक
- शैक्षणिक

अपर्याप्त प्रतिनिधित्व

प्रशासनिक दक्षता

117 वें संविधान संशोधन विधेयक वर्ष 2012 में राज्यसभा में लाया गया जो कि एस.सी., एस.टी. के पदोन्नति में आरक्षण से सम्बन्धित है। इसके द्वारा अनुच्छेद 16(IV)A में उल्लेखित 'अपर्याप्त प्रतिनिधित्व' शब्द को हटाना प्रस्तावित हैं। इस विधेयक को लाने का मुख्य कारण उत्तरप्रदेश और राजस्थान के मामलों में अनुसूचित जाति व जनजाति के पदोन्नति में आरक्षण पर उच्चतम न्यायालय द्वारा रोक लगाना है।

अनुच्छेद 16(VI) – इसके द्वारा आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के लिये लोक नियोजन में दस प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया हैं। इसे 103 वें संविधान संशोधन द्वारा 2019 में जोड़ा गया हैं।

अनुच्छेद 17 :- इसके तहत् छूआछूत अर्थात् अस्पृश्यता पर रोक लगाई गयी हैं। इसे लागू करने हेतु में 1955 में अस्पृश्यता निवारण अधिनियम बनाया गया था। जिसे 1976 में संशोधन कर **नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम 1976** में नाम दिया गया।

1989 में अनुसूचित जाति, जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम 1989 बनाया गया। जनवरी 1990 में ये लागू हुआ। इस संदर्भ में मोदी सरकार द्वारा किए गये संशोधन 14 अप्रैल 2016 को लागू हुए। **एस.के. महाजन बनाम भारत संघ (2018)** के मामले में 20 मार्च 2018 को इस अधिनियम के संदर्भ में दिशा निर्देश दिए। इस मामले में भारत सरकार ने पूर्नविचार याचिका दायर की हैं।

अनुच्छेद 18 :- इसके तहत् शिक्षा तथा सेना को छोड़कर सभी प्रकार की उपाधियों पर रोक लगाई गयी हैं। कोई भी भारतीय नागरिक राष्ट्रपति की सहमति के बिना किसी भी अन्य देश से किसी भी प्रकार की

कोई उपाधि प्राप्त नहीं कर सकता हैं। 1954 में पहली बार भारत रत्न तथा पदम् पुरस्कार दिये गये थे। सर्वोच्च न्यायालय के दिशा–निर्देश के अनुसार कोई भी व्यक्ति अपने नाम के आगे या पीछे इन उपाधियों का उपयोग नहीं कर सकता हैं। 1977 में मोरारजी देसाई की सरकार द्वारा इन उपाधियों पर रोक लगाई। बाद में इन्दिरा गाँधी की सरकार द्वारा 1980 में इन्हें पुनः प्रारम्भ किया गया।

स्वतंत्रता का अधिकार

(अनुच्छेद 19 से 22 तक)

अनुच्छेद 19 रू. अनुच्छेद 19(i) में 6 प्रकार की स्वतंत्रताओं का उल्लेख हैं –

- भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता। इस स्वतंत्रता का उल्लेख प्रस्तावना में भी हैं।
- बिना हथियारों व शान्तिपूर्वक बैठक करने की स्वतंत्रता।
- संगठन या संघ बनाने की स्वतंत्रता। 97 वें संविधान संशोधन 2012 के तहत् अनुच्छेद 19(I)c में संशोधन कर **'सहकारी समितियाँ की स्थापना की स्वतंत्रता'** का भी प्रावधान किया गया।
- घुमने फिरने (विचरण) करने की स्वतंत्रता ।
- रहने या बसने की स्वतंत्रता।
- व्यापार या व्यवसाय करने की स्वतंत्रता।

44वें संविधान संशोधन के द्वारा 1978 में अनुच्छेद 19(I)f में उल्लेखित सम्पत्ति अर्जित करने की स्वतंत्रता को समाप्त कर दिया गया है। 'प्रेस की स्वतंत्रता' जैसा शब्द संविधान में उल्लेखित नहीं हैं परन्तु यह 19(i) () भाग में सम्मिलित माना गया हैं। 'सूचना के अधिकार' का संविधान में स्पष्ट उल्लेख नहीं है, लेकिन इसे भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का भाग माना जाता हैं। **एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ 1978 वाद** व **पी.यू.सी.एल. बनाम भारत संघ 2002** के मामले में न्यायालय ने ये भी निर्णय दिया था कि उम्मीदवारों की पृष्ठभूमि की जानकारी देना अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का भाग हैं।

नवीन जिन्दल बनाम भारत संघ 2002 [8] के मामले में राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा लहराने या फहराने को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का भाग माना गया हैं। **श्याम नारायण चौकसे बनाम भारत संघ वाद 2016** [9] के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने सिनेमा घरों में राष्ट्रगान बजाना अनिवार्य किया था। (फिलहाल अनिवार्य नहीं हैं।)

अनुच्छेद 19(ii) से 19(vi) तक उन बातों का उल्लेख हैं, जिनसे इन स्वतंत्रताओं पर रोक लगायी जा सकती हैं –

- देश की सम्प्रभूता व अखण्डता।
- लोक व्यवस्था
- देश की सुरक्षा
- न्यायिक अवमानना
- अन्य देशों के सम्बन्ध।
- अपराधों में वृद्धि
- मानहानि
- शिष्टाचार या सदाचार के हित में।

मूल संविधान में यहाँ लोकव्यवस्था, अन्य देशों के साथ सम्बन्ध तथा अपराधों में वृद्धि जैसी शब्दावली उल्लेखित नहीं थी लेकिन **रोमेश थापर बनाम् मद्रास राज्य (1951)** [10] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने लोक व्यवस्था के आधार पर नागरिकों की स्वतंत्रता पर रोक लगाने से इन्कार कर दिया था। क्योंकि इसका उल्लेख संविधान में नहीं था। अतः इसका प्रभाव समाप्त करने हेतु लोक व्यवस्था को प्रथम संशोधन द्वारा 1951 में जोड़ा गया था।

अनुच्छेद 20 :- अपराधों के लिए दोष सिद्धि के संबंध में (इसमें तीन बातों का उल्लेख हैं)

- जिस व्यक्ति ने जिस समय अपराध किया है, उस व्यक्ति को उसी समय के कानून के तहत ही सजा दी जायेगी।
- किसी भी व्यक्ति को एक अपराध के लिए दो सजा नहीं दी जायेगी।
- किसी भी व्यक्ति को स्वयं के विरूद्ध गवाही (साक्ष्य) देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

सेल्वी बनाम कर्नाटक वाद 2010 के मामले में न्यायालय ने 'ब्रेन मैकिंग', नार्को तथा लार्ड डिटेटर आदि के उपयोग पर रोक लगा दी।

अनुच्छेद 21 :— जीवन का अधिकार – (प्राण व दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण) साधारण अर्थों में केवल जीवन के अधिकार का उल्लेख करता है। लेकिन अनुच्छेद 21 की न्यायालय ने व्यापक व्याख्या की है।

इसे सबसे ज्यादा व्यापक अनुच्छेद माना जाता है।

मेनका गाँधी बनाम भारत संघ (1978) के मामले में ये निर्णय दिया था कि विदेश जाने का अधिकार जीने के अधिकार में शामिल हैं।

बेगम हुसेन आरा बनाम बिहार राज्य (1978) में ये निर्णय दिया गया था कि सभी व्यक्तियों को अपने मामलों की शीघ्रता से सुनवाई अनुच्छेद 21 का भाग है।

विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (1997) में ये निर्णय दिया गया था कि कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से सुरक्षा भी अनुच्छेद 21 का भाग है।

पी.यू.सी.एल. बनाम भारत संघ (2010) के मामले में फोन टैपिग को अनुच्छेद 21 का भाग माना है।

के.एस पुट्टा स्वामी बनाम भारत संघ (2017) के मामले में आधार की अनिवार्यता पर रोक लगाई तथा निजता की स्वतंत्रता को अनु. 21 का भाग माना है।

एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ के मामलों में ये निर्णय दिया गया कि शुद्ध पर्यावरण भी अनुच्छेद 21 का भाग हैं।

अरूणा रामचन्द्र शानबाग बनाम भारत संघ (2011) [11] के मामले में ये निर्णय हुआ था कि जीने के अधिकार में मरने का अधिकार शामिल नहीं है, लेकिन किसी व्यक्ति को असाध्य बीमारी हो जाये तथा डॉक्टर्स का मेडिकल बोर्ड इस संदर्भ में प्रमाण पत्र दे दे तो उसे मरने दिया जा सकता हैं।

अनुच्छेद 21 में उल्लेखित दैहिक स्वतंत्रता ने न्यायपालिका की भूमिका को बढ़ा दिया है। अनुच्छेद 21 की विस्तृत व्याख्या करते हुये न्यायपालिका ने इसमें अन्य अधिकारों को भी शामिल किया हैं। निजता के अधिकार का उल्लेख यूं तो संविधान के किसी भी अनुच्छेद में नहीं है लेकिन उच्चतम न्यायालय ने इसे अनुच्छेद 21 में शामिल किया। पी.यू.सी.एल. बनाम भारत संघ वाद 1997 [12] के वाद में फोन टैपिंग को निजता के अधिकार का हनन मानते हुये इसे अनुच्छेद 21 निहित माना। गत वर्ष 2017 में के.एस. पुट्टास्वामी बनाम भारत संघ 2017 [13] में दिये अपने निर्णय में नौ सदस्यीय संविधान पीठ ने एकान्तता के अधिकार को एक बार फिर स्थापित किया हैं। इस वाद में सेवाओं में आधार कार्ड की अनिवार्यता को चुनौती दी गई थी। इसका यह परिणाम हुआ कि कई सेवाओं में आधार की अनिवार्यता समाप्त कर दी गई।

नवतेज कौर बनाम भारत संघ 2018 [14] के वाद में आई.पी.सी. की धारा 377 की वैधानिकता को चुनौती दी गई थी। धारा 377 में यह प्रावधान है कि जो कोई किसी पुरूष, स्त्री या जीव जन्तु के साथ प्रकृति की व्यवस्था के विरूद्ध इन्द्रिय योग करेगा वह आजीवन कारावास से या दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दण्डित किया जायेगा और जुर्माने से भी दण्डनीय होगा। न्यायालय ने अपने निर्णय में पूर्णतया स्पष्ट किया कि एल.जी.बी.टी. समुदाय के व्यक्ति को भी उसी प्रकार संविधान प्रदत्त मूलाधिकारों को प्राप्त करने के लिए हकदार है, जिस प्रकार एक सामान्य नागरिक। दीपक मिश्रा की अध्यक्षता

वाली संविधान पीठ ने 6 सितम्बर 2018 को दिये अपने निर्णय में स्पष्ट किया कि धारा 377 का दण्डनीय प्रावधान उस विस्तार तक असंवैधानिक है जितना वह एल.जी.बी.टी. (लेसबियन, गे, बाई सेक्सुअल व ट्रांस जेंडर) को अधिकारों का उल्लंघन करती है। संविधान पीठ ने यह भी स्पष्ट किया कि धारा के दण्डनीय प्रावधान उस सीमा तक भी असंवैधानिक है जहाँ तक वह दो वयस्क व्यक्तियों के बीच सहमति जन्य यौन सम्बन्धों को दण्डनीय बनाता है।

न्यायालय का यह निर्णय निजता के अधिकार की व्यापक व्याख्या करता हैं। पीठ के एक सदस्य न्यायमूर्ति आर.एफ. नरीमन ने तो अपने निष्कर्ष में भारत सरकार को यह भी सुनिश्चित करने के लिए कहा जिसमें वह इस निर्णय का जनता में दूरदर्शन, रेडियों, प्रिन्ट व ऑनलाईन मीडिया के माध्यम से व्यापक प्रचार–प्रसार करें।

सितम्बर 2018 के अन्तिम सप्ताह में एक बार फिर न्यायालय ने अनुच्छेद 21 को अधार बनाते हुए एक नया निर्णय दिया। **जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ 2018** [15] के वाद में आई.पी.सी. की धारा 497 को अनुच्छेद 21 के साथ असंगता के कारण चुनौती दी गई। आई.पी.सी. की धारा 497 जारता यानि यौन व्याभिचार को परिभाषित करती थी।

धारा 497 के अन्तर्गत किसी पुरूष किसी अन्य पुरूष की पत्नी के साथ (सब कुछ जानते हुये भी) मैथुन करता है, वह जारता होगी। इस अपराध में पाँच वर्ष तक की सजा देने व पत्नी को दुष्प्रेरक के रूप में दण्डनीय नहीं करने का प्रावधान था। संविधान पीठ ने अपने निर्णय में कहा कि यह धारा महिला की गरिमा व लैंगिक समानता के सिद्धान्तों के प्रतिकुल होने के कारण अनुच्छेद 21 के विरूद्ध हैं।

8 मार्च 2018 को उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने ऐतिहासिक निर्णय सुनाया। **कॉमन कॉज बनाम भारत संघ वाद 2018** के वाद में गठित पीठ ने गरिमा के साथ मरने के अधिकार को अनुच्छेद 21 में शामिल कर अनुच्छेद 21 को अत्यधिक विस्तारित रूप प्रदान किया। पीठ ने स्पष्ट कहा कि जब व्यक्ति का जीवन क्षयशील हो जाये अथवा उसके ठीक होने की कोई संभावना नहीं है, उसके कष्ट को कम करने हेतु उसे मरने दिया जा सकता है। पीठ ने एक्टिव व पैसिव युथेनेशिया में अन्तर स्पष्ट करते हुये कहा कि एक्टिव यूथेनेशिया स्वीकारात्मक कृत्य है जबकि पैसिव यूथेनेशिया कृत्रिम रूप से जीवन को बनाये रखने हेतु जीवनदायी यंत्रों को हटा देने अथवा चिकित्सीय उपचारों को बंद कर देने से सम्बन्धित है। न्यायालय ने पैसिव यूथेनेशिया को इसमें स्वीकार किया साथ ही यह भी कहा कि जब तक संसद कानून नहीं बना ले तब तक न्यायालय के निर्देश ही लागू होंगे। इस संदर्भ में हमें वर्ष 2011 के **अरूणा रामचन्द्र शानबाग बनाम् भारत संघ** के वाद को भी ध्यान में रखना चाहिए। जिसमें इस प्रकार के रूपष्ट संकेत थे। उपर्युक्त निर्णय अरूणा रामचन्द्र वाद का विस्तारित रूप है।

अनुच्छेद 21A & 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को अनिवार्य व निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा। 86वें संविधान संशोधन द्वारा वर्ष 2002 में इसे जोड़ा गया था। वर्ष 2000 में वाजपेयी सरकार द्वारा उच्चतम न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश एम.एन वैकट चल्लैया की अध्यक्षता में संविधान समीक्षा आयोग का गठन किया गया था। वर्ष 2002 में इसने अपना प्रतिवेदन दिया। इस आयोग ने 6 से 18 वर्ष तक के बच्चों के लिए निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा का सुझाव दिया था। इसी आयोग की अनुशंसा के फलस्वरूप संशोधन हुआ था।

अनुच्छेद 22 : निरोध एवं गिरफ्तारी से संरक्षण। किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार करते समय, जो उसे अधिकार प्राप्त होते हैं उनका उल्लेख इसमें है।

- उसे अपनी गिरफ्तारी के कारणों को जानने का अधिकार हैं।
- उसे वकील से सहायता लेने का अधिकार हैं
- उसे 24 घण्टे के भीतर मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होने का अधिकार हैं।

अनुच्छेद 22 में ये भी उल्लेखित है कि दुश्मन देश के व्यक्तियों तथा निरोधक कानून के तहत् गिरफ्तार होने वाले व्यक्तियों पर ये अधिकार लागू नहीं होते है और 3 महिने से अधिक निरोधक कानून के के अन्तर्गत रखने के लिए न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक समिति की अनुमति की आवश्यकता होती हैं।

शोषण के विरूद्ध अधिकार

(अनुच्छेद 23–24)

अनुच्छेद 23 : इसके द्वारा बेगार प्रथा तथा मानव के बलात श्रम व्यापार पर रोक लगाई गई हैं। इसमें यह उल्लेखित है कि राज्य सार्वजनिक प्रयोजन में लोगों से कार्य कब करवाया जा सकता है।

राजस्थान में प्रचलित रही हाली या सागडी प्रथा पर रोक भी इसी अनुच्छेद द्वारा लगाई गयी हैं।

अनुच्छेद 24 :– 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों से खतरनाक कारखानों में काम नहीं करवाया जायेगा।

धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

(अनुच्छेद 25 से 28)

अनुच्छेद 25 :– सभी व्यक्तियों लोक व्यवस्था, सदाचार तथा स्वास्थ्य के अन्तर्गत रहते हुए अपने–अपने धर्म को मानने तथा उसका प्रसार करने तथा धर्म के अनुरूप आचरण करने तथा अन्तःकरण की स्वतंत्रता होगी। इनमें ये भी उल्लेखित है कि सिखों के द्वारा कृपाण धारण करना उनके धर्म के अनुरूप आचरण माना जायेगा।

अनुच्छेद 25 या किसी भी अनुच्छेद में धर्म परिवर्तन के अधिकार का स्पष्ट उल्लेख नहीं हैं। अनुच्छेद 25 ये भी उल्लेखित है कि प्रलोभन या दबाव में धर्म परिवर्तन करने पर राज्य रोक लगा सकता हैं। सामाजिक कल्याण व सुधार के लिए हिन्दू धर्म से सम्बन्धित सभी स्थल व मंदिर समाज के सभी वर्गों के लिए खुले रखने का भी प्रावधान इसमें हैं। अनुच्छेद 25 में भी यह उल्लेखित है कि यहाँ शहिन्दूश शब्द में जैन, बौद्ध व सिख भी शामिल हैं। **अरूणा राय बनाम भारत संघ (2003)** [16] के मामले में पंथ निरपेक्षता को महत्वपूर्ण सिद्धान्त बतलाया। अनुच्छेद 25 को आधार बनाकर **इंडियन यंग लॉयर्स बनाम भारत संघ (2018)** [17] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने केरल के सबरीमाला मंदिर में 10 से 50 वर्ष की महिलाओं के प्रवेश को उनके अधिकार के रूप में स्वीकार किया है।

अनुच्छेद 26 :– लोक व्यवस्था, सदाचार तथा स्वास्थ्य के अन्तर्गत रहते हुए प्रत्येक को– 1. अपनी धार्मिक संस्थाओं को स्थापित करने। 2. धर्म सम्बन्धी मामलों का प्रबन्धन करने। 3. चल (जघम)– स्थल (स्थावर) सम्पत्ति अर्जित करने। 4. उसका उचित प्रबन्धन करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 27 :– किसी एक धर्म को बढ़ावा देने पर राज्य किसी भी व्यक्ति को कर देने के लिए बाध्य नहीं कर सकता। इसका ये अर्थ नहीं है कि राज्य धार्मिक संस्थाओं को अनुदान नहीं दे सकता हैं। लेकिन इस संदर्भ में राज्य सभी धर्मों के साथ समान व्यवहार करेगा।

अनुच्छेद 28 :– किसी भी सरकारी अथवा सरकार से सहायता प्राप्त अथवा सरकार से मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्थान में किसी भी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायेगी।

संस्कृति एवं शिक्षा सम्बन्धी अधिकार

(अनुच्छेद 29 से 30 तक)

अनुच्छेद 29 :– भारत के राज्य क्षेत्र में निवास करने वाले सभी नागरिकों को अपनी भाषा, लिपि, संस्कृति को बनाये रखने का अधिकार होगा। इसमें यह उल्लेखित है कि राज्य द्वारा पोषित या सहायता प्राप्त शिक्षण संस्था में किसी भी नागरिक को धर्म, मूलवंश, जाति के आधार पर प्रवेश से वंचित नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद 30 :– सभी अल्पसंख्यकों को अपनी शिक्षण संस्थाओं की स्थापना करने तथा उसका प्रबन्धन करने का अधिकार होगा। मदरसों में दी जाने वाली इस्लामिक शिक्षा का आधार अनुच्छेद 30 ही हैं। अनुच्छेद 30 के कारण आरटीई 2009 अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थानों पर लागू नहीं होता हैं।

44वें संविधान संशोधन के द्वारा 1978 में अनुच्छेद 31 में उल्लेखित सम्पत्ति के अधिकार को मूल अधिकार के रूप में समाप्त कर दिया गया था। अब यह अनुच्छेद 300A के अन्तर्गत एक विधिक अधिकार है। विधिक अधिकारों को अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत संरक्षण प्राप्त नहीं है। प्रथम संविधान संशोधन द्वारा 31A एवं 31B नामक दो अनुच्छेद जोड़े गये।

अनुच्छेद 31A के अनुसार राज्य लोक हित में सम्पत्ति प्राप्त कर सकता हैं। जबकि अनुच्छेद 31ठ में ये उल्लेखित है कि कुछ कानूनों को न्याय पालिका में चुनौती नहीं दी जा सकती हैं। नौवीं अनुसूची इसी से सम्बन्धित है।

अनुच्छेद 31C & 25वें संविधान संशोधन द्वारा 1971 में 31C नामक नया अनुच्छेद जोडा गया था तथा इसमें ये उल्लेखित है कि अनुच्छेद 39(b) एवं अनुच्छेद 39(c) का टकराव यदि मौलिक अधिकारों के साथ होता है तो अनुच्छेद 39(b) एवं अनुच्छेद 39(c) को प्राथमिकता दी जायेगी। 42वें संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 31C में यह जोड़ा गया कि सभी नीति निर्देशक तत्वों को सभी मौलिक अधिकारों पर प्राथमिकता दी जायेगी। **मिनर्वा मिल्स बनाम भारत संघ वाद 1980** [18] में इसे चुनौती दी गई। न्यायालय ने इस वाद में 42वें संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 31C में किये गए उपरोक्त संशोधन को रद्द करते हुए यह निर्णय दिया कि **मौलिक अधिकार व नीति निर्देशक तत्व एक–दूसरे के पूरक है।** साथ ही न्यायालय ने यह भी कहा कि इन दोनों में सामंजस्य संविधान की आधारभूत संरचना है।

संवैधानिक उपचारों का अधिकार

(अनुच्छेद 32)

अनुच्छेद 32 (i) में ये उल्लेखित है कि यदि मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होता है, तो उच्चतम न्यायालय याचिकाऐं जारी कर सकता है।

अनुच्छेद 32(ii) के तहत् उच्चतम न्यायालय निम्न 5 याचिकाएं जारी कर सकता हैं –

- **हैबियस कार्पस (बन्दी प्रत्यक्षीकरण) :–** इसका शाब्दिक अर्थ **'शरीर सहित उपस्थित'** करना हैं। किसी भी व्यक्ति को अवैध रूप से बंदी बना लेने पर उसे छुड़वाने हेतु जारी गई याचिका **बन्दीप्रत्यक्षीकरण** कहलाती है। यह राज्य व व्यक्ति दोनों के विरूद्ध जारी की जा सकती है। यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

हैबियस कार्पस वाद

आपातकाल के दौरान लोगों के अवैध रूप बन्दी बना लेने पर भारत के विभिन्न उच्च न्यायालय ने बन्दी प्रत्यक्षीकरण याचिका जारी की थी। जिसे **एडीएम जबलपुर बनाम शुक्ला (1975) वाद** में चुनौती दी गई। इस वाद में 5 न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ का गठन किया था। मुख्य न्यायाधीश अजीत नाथ रे इस पीठ के अध्यक्ष थे। 4–1 से निर्णय दिया। जिसमें उच्च न्यायालय के निर्णय को खारिज कर दिया गया। इसे हैबियस कार्पस के नाम से जाना जाता हैं।

- **मैण्डेमस (परमादेश) :–** इसका शाब्दिक अर्थ श्हम आदेश देते हैं।श किसी भी संस्था द्वारा अपने निर्धारित कार्यों को नहीं किये जाने पर उस संस्था को वे कार्य करने का निर्देश देना।
- **प्रोहिबिशन (प्रतिषेध) :–** शाब्दिक अर्थ 'निषेध करना या रोकना हैं।' किसी भी संस्था द्वारा अपने निर्धारित कार्यों से बाहर जाकर कार्य करने पर उस संस्था को कार्य करने से रोकने हेतु यह जारी की जाती है।
- **सर्सियोरी (उत्प्रेक्षण) :–** शाब्दिक अर्थ 'निषेध करना या रोकना है।' किसी भी संस्था द्वारा अपने निर्धारित कार्यों से बाहर जाकर कार्य करने पर उस संस्था को वे कार्य करने से रोकने हेतु यह जारी की जाती है।

प्रतिषेध और उत्प्रेक्षण दोनों में रोक का प्रावधान है, लेकिन प्रतिषेध याचिका कार्य की समाप्ति के पश्चात् और उत्प्रेक्षण याचिका को कार्य के दौरान जारी की जाती हैं।

- **को–वारण्टो (अधिकार पृच्छा) :–** इसका शाब्दिक अर्थ शकिस अधिकार सेश होता हैं। किसी भी व्यक्ति द्वारा असंवैधानिक ढ़ग से किसी पद को प्राप्त करने पर उसे हटाने हेतु जारी की गई याचिका अधिकार पृच्छा कहलाती है। इस प्रकार उच्चतम न्यायालय मौलिक अधिकारों का अभिभावक है।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने अनुच्छेद 32 को **'भारतीय संविधान की आत्मा'** कहा था।

अनुच्छेद 32(iii) में ये उल्लेखित है कि संसद कानून बनाकर उच्चतम न्यायालय के अलावा अन्य न्यायालय को भी याचिकाएं जारी करने का अधिकार दे सकती हैं। याचिकाएं जारी करने के मामले में उच्चतम न्यायालय की तुलना में उच्च न्यायालय अधिक शक्तिशाली है। क्योंकि

सर्वोच्च न्यायालय केवल मौलिक अधिकारों के उल्लंघन पर ही याचिकाएं जारी कर सकता हैं, जबकि उच्च न्यायालय मौलिक अधिकारों के साथ–साथ विधिक अधिकारों की रक्षा के लिए भी याचिकाएं जारी कर सकता हैं।

उच्च न्यायालय 6 याचिकाऐं जारी करता है। अनुच्छेद 226 के तहत् उच्च न्यायालय 'इंजक्शन' नामक याचिका जारी कर सकता हैं। इसके द्वारा 'अन्तरिम राहत' उपलब्ध करवायी जाती हैं।

अनुच्छेद 33 :– सैन्य बल, अर्द्धसैनिक बल अन्वेषण (खुफियागिरी) तथा लोक व्यवस्था बनाये रखने वाले लोगों के मौलिक अधिकारों में संसद कानून बनाकर कमी कर सकती हैं। इसका उद्देश्य सेना में अनुशासन बनाये रखना। इसके अन्तर्गत संसद ने निम्न विधियों का निर्माण किया है– (I) सेना एक्ट 1950 (II) एयरफोर्स एक्ट 1950 (III) नेवी एक्ट 1950 (IV) पुलिस फोर्स अधिकार अधिनियम एक्ट 1966 (V) सीमा सुरक्षा बल एक्ट 1968।

अनुच्छेद 34 :– देश में सैन्य शासन (मार्शल लॉ) से होने वाले नुकसान हेतु संसद कानून बना सकती हैं। इसके अन्तर्गत भारत किसी भी क्षेत्र में यदि सैन्य एक्ट लागू है, तो संसद को यह अधिकार है कि मूल अधिकारों पर प्रतिबंध आरोपित किये जा सकते है। संसद विधि के द्वारा सरकारी कर्मचारियों द्वारा किये गये कार्यों और उनके द्वारा पारित नियमों को वैध ठहरा सकती है।

सैन्य शासन (मार्शल लॉ) क्षेत्र में मौलिक अधिकारों का क्रियान्वयन रोका जा सकता है। जैसे मणिपुर तथा जम्मू कश्मीर में 'सैन्य बल विशेष शक्ति अधिनियमश लागू है।

इस अधिनियम के लागू होने के दौरान संसद सैन्य बलों के कार्यों को उचित ठहरा सकती है।

द आर्मड फोर्सेस स्पेशल पॉवर एक्ट (AFSPA) Sept. 11, 1958 (सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम) यह अधिनियम इसी से सम्बन्धित है।

अनुच्छेद 35 :– अनुच्छेद 16(iii) निवास के आधार पर भेदभाव, अनुच्छेद 32(iii) संसद उच्चतम न्यायालय के अलावा अन्य न्यायालयों को भी याचिका जारी करने का अधिकार दे सकती है। अनुच्छेद 33 व 34 के संदर्भ में कानून बनाने का अधिकार केवल संसद को होगा। राज्य विधानमण्डल इस संदर्भ में कानून नहीं बना सकते हैं।

आपातकाल में अनुच्छेद 20 व अनुच्छेद 21 कभी भी निलंबित नहीं किये जा सकते है। 352 के तहत् लागू सशस्त्र विद्रोह के दौरान अनुच्छेद 19 भी निलंबित किया जा सकता हैं।

अनुच्छेद 20 और 21 को छोड़कर शेष अनुच्छेद निलंबन की बात अनुच्छेद 359 में कही गयी हैं। जबकि अनुच्छेद 19 को सशस्त्र विद्रोह होने के कारण निबलंबन किया जा सकता हैं। अनुच्छेद 19का निलंबन अनुच्छेद 358 के अन्तर्गत आता हैं।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि संविधान में उल्लेखित मौलिक अधिकारों की रक्षार्थ न्यायपालिका ने महत्वपूर्ण कार्य किये हैं और इस भूमिका के कारण कई बार न्यायपालिका बनाम् कार्यपालिका तथा न्यायपालिका बनाम् व्यवस्थापिका की स्थिति भी पैदा हुई हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. केशवानंद भारती बनाम् केरल राज्य (1973) 4 SCC 225; AIR 1973 SC 1461
2. श्रेया सिंघल बनाम् भारत संघ (2013) 12 SCC 73
3. जोसेफ शाइन बनाम् भारत संघ (2018) SCC 1676
4. चम्पाकम दोरायजन बनाम् मद्रास राज्य AIR 1951 SC 226
5. अशोक कुमार ठाकुर बनाम् भारत संघ (2008) INSC 613
6. इन्द्रा साहनी बनाम् भारत संघ (1992) SCC 217
7. एम. नागराज बनाम् भारत संघ और अन्य (2006) 8 SCC 212
8. नवीन जिंदल बनाम् भारत संघ (2002)
9. श्याम नारायण चौकसे बनाम् भारत संघ (2016)
10. रोमेश थापर बनाम् मद्रास राज्य (1951)
11. अरूणा रामचन्द्र शानबाग बनाम् भारत संघ (2011)
12. पी.यू.सी.एल. बनाम् भारत संघ वाद (1997)
13. के. एस. पुट्टास्वामी बनाम् भारत संघ (2017)
14. नवतेज कौर बनाम् भारत संघ (2018)
15. जोसेफ शाइन बनाम् भारत संघ (2018)
16. अरूणा राय बनाम् भारत संघ (2003)
17. इंडियन यंग लॉयर्स एसोसिएशन बनाम् भारत संघ (2018)
18. मिनर्वा मिल्स बनाम् भारत संघ (1980)

❖◆❖